International Journal of Sanskrit Research 2024; 10(1): 217-219

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2024; 10(1): 217-219
© 2024 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 20-11-2023
Accepted: 25-12-2023

सुनिता सेंगाडा
स्व. श्री भीखाभाई भील राजकीय महाविद्यालय, सागवाड़ा, डूंगरपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
सुनिता सेंगाडा
स्व. श्री भीखाभाई भील राजकीय महाविद्यालय, सागवाड़ा, डूंगरपुर, राजस्थान, भारत

वैदिक काल में नारी शिक्षा

सुनिता सेंगाडा

DOI: https://doi.org/10.22271/23947519.2024.v10.i1d.2318

सारांश
किसी भी सभ्यता की उन्नति एवं श्रेष्ठता का आकलन तत्कालीन समाज में नारियों की स्थिति से किया जा सकता है। विश्वगुरु के नाम से प्रसिद्ध भारत देश की सभ्यता अपने दीर्घ इतिहास की विभिन्न कालावधियों में नारी दशा के दृष्टिकोण से उच्चता तथा निम्नता के मध्य विभिन्न सोपानों पर स्थित रही हैं। वैदिककालीन भारतीय समाज प्रायः पुरूष प्रधान रहा हैं। तथापि नारियों को पुरूष के समान सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। जिसका मुख्य कारण स्त्री शिक्षा ही हैं। प्रस्तुत शोधालेख में वैदिक कालीन नारी शिक्षा को दर्शाने का प्रयास किया गया हैं। जिससे पाठकगण नारी शिक्षा के महत्व से परिचित हो सके।

कूटशब्दः भारतीय सभ्यता, वैदिक काल में नारी शिक्षा, नारी सम्मान, शिक्षा का प्रभाव

प्रस्तावना
किसी भी सभ्यता की उन्नति एवं श्रेष्ठता का आकलन तत्कालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति से किया जा सकता है। भारतीय सभ्यता के दीर्घ इतिहास की विभिन्न कालावधियों में स्त्रियों की दशा उच्चता तथा निम्नता के मध्य विभिन्न सोपानों पर अवस्थित रही है। भारतीय समाज प्रायः पुरुषप्रधान रहा है। किन्तु पुरुष प्रधान समाज में भी नारी की महत्ता सहज रूप से स्वीकार्य रही है। प्रस्तुत अध्याय में वैदिक काल में नारियों की शैक्षणिक स्थिति को दर्शाने वाले कतिपय उदाहरणों को संकलित किया गया है–

वैदिक काल यद्यपि पुरुष प्रधान समाज था। तथापि नारियों को पुरुष के समान ही सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। पुत्री जन्म अवाञ्छित नहीं था। पुत्रियों को पुत्र की भाँति ही उपनयन संस्कार सम्पन्न कर विधिवत शिक्षित किया जाता था। अनेक मन्त्रदृष्टा ऋषिकाओं का उल्लेख वेदों में प्राप्त होता है। विवाह वयस्क अवस्था में सर्वसम्मति से सम्पन्न होते थें। विभिन्न विधाओं में सुशिक्षित कन्या विवाह पश्चात् गृहस्थजीवन में भी सम्मान की पात्र होती थी।

भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता में प्रारम्भ से ही वंशपरम्परा की वृद्धि हेतु पुत्र जन्म अनिवार्य माना जाता रहा है। सुसंस्कृत माता–पिता पुत्रियों हेतु प्रायः वैसे ही उत्सुक होते थें, जैसे पुत्रों के लिये। प्रारम्भिक उपनिषदों में से एक उपनिषद् गृहस्थ को विदुषी पुत्री प्राप्ति हेतु निश्चित धार्मिक कृत्य की अनुशंसा भी करता है।[1] पुत्र–पुत्री में कोई भेदभाव नहीं था। जैसा कि ऋग्वेद में प्रार्थना की गई है –

''अविता नो अजाश्वः पूषा यामनियामनि आ भक्षत्कन्यासु नः।'' [2]

पुत्र–पुत्री दोनों ही माता–पिता की अपनी ही आत्मा के प्रतिरूप स्वीकार किये जाते थें। ''वे वैदिक अध्ययन में दीक्षित की जा सकती थी और देवों को यज्ञ प्रस्तुत करने के लिये अधिकृत की जाती थी, इस प्रयोजन के लिये पुत्र आत्यन्तिक रूप से आवश्यक नहीं था। पुत्री का विवाह एक कठिन समस्या नहीं थी, उसका स्वयं पुत्री के द्वारा प्रायः समाधान कर दिया जाता था।''[3]

''अथर्वा ऋषि ने अथर्ववेद में कन्या के यज्ञ एवं वर्चस्व को स्वीकारा है।''[4] ''परिवार में कन्याएँ अपने आदर्श गुणों को विकसित करती हुई प्रायः माता के शासन में रहती थीं। माता के साथ वह गृहकार्यों को सीखती तथा उसे सहायता देती थी।''[5] ऋग्वेद में कन्या को उच्च स्थान प्राप्त था [6]।

''पुत्री के जन्म के समय विषाद, उदासीनता और असन्तोष का भाव क्षणिक था, वह प्राचीन भारत में नारी शिशु–हत्या का कारण नहीं बना।''[7]

वैदिक कालीन शिक्षित, विदुषी नारी सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों में सक्रिय भागीदारी निभाती थी। उनकी वेशभूषा शालीन होती थी। लज्जा को स्त्री का आभूषण स्वीकारते हुए वस्त्रों से अंगों को भलीभांति आवृत करने के सन्दर्भ वेदों में उपलब्ध हैं।[8]

वे परिवार के कृषि–क्षेत्रों को संभालती थी। वैदिक काल में सहशिक्षा का प्रचलन था। नवविवाहित वधू को वृद्धावस्था तक सार्वजनिक सभाओं में शान्ति के साथ बोलने का आशीर्वाद दिया जाता था।[9] वैदिक ऋषि उत्सव हेतु बाहर जाती हुई प्रफुल्लित वेशभूषा से सुसज्जित महिला का वर्णन करते हैं।[10]

''मिम्यक्षयषु सुधिता घृताची हिरण्यनिर्णिगुपरा न ऋष्टिः।
गुहा चरन्ती मनुषो न योषा सभावती विदथ्येव सं वाक्।''[11]

वैदिक काल में स्त्रियों हेतु धर्माचरण तथा शालीनता अपेक्षित थी। उनके व्यक्तिगत विकास को कुण्ठित नहीं किया जाता था।
वैदिककालीन नारी अपनी बौद्धिक एवं आध्यात्मिक उन्नति हेतु स्वतन्त्र थी। जीवन में अनुशासन और शिक्षा प्राप्ति हेतु उपनयन का अनुष्ठान सम्पन्न होता था। जो उपयुक्त वर–वधू प्राप्ति हेतु अत्यधिक अनिवार्य होता था। अथर्ववेद में प्राप्त सन्दर्भ के अनुसार कन्या उसके वैवाहिक जीवन में तभी सफल हो सकती है जब उसे विद्यार्थी जीवन में उचित रीति से प्रशिक्षित किया गया हो –

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् ।।[12]

वेद ऋचाओं की रचयिता एवं पुरुषों से शास्त्रार्थ करने वाली अनेक विदुषियों का उल्लेख वेदों में उपलब्ध है। मंत्रद्रष्टा स्त्रियों द्वारा साक्षात्कार की गई ऋचाओं को वैदिक संहिताओं में समाहित कर उन्हें ऋषिका की उपाधि से सुशोभित किया गया है। इसमें लगभग 25 ऋषिकाओं का वर्णन बृहद्देवता में आचार्य शौनक द्वारा किया गया है। [13]
नारी विद्यार्थी को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– ब्रह्मवादिनियाँ और सद्योद्वाहा। ब्रह्मवादिनियाँ धर्मविज्ञान और दर्शनशास्त्र का आजीवन अध्ययन किया करती थीं। विवाहपर्यन्त अर्थात् 15–16 वर्ष की आयु तक अध्ययनरत कन्या विद्यार्थी सद्योद्वाहा कही जाती थी। उनकी शिक्षा दैनिक और आवधिक प्रार्थनाओं तथा विवाह पश्चात् गृहस्थ जीवन में अनिवार्य धार्मिक अनुष्ठानों और संस्कारों में सम्बन्धित होती थी। ब्रह्मवादिनियाँ वेदाध्ययन के अतिरिक्त पूर्वमीमांसा,वैदिक यज्ञों से सम्बन्धित नानाविध समस्याओं का तार्किक विवेचन तथा विशेष अध्ययन किया करती थीं।
''काशकृत्स्न नामक एक धर्ममीमांसक ने मीमांसा पर काशकृत्स्नी नामक ग्रन्थ की रचना की जो महिला विदुषियाँ उसका विशेष अध्ययन किया करती थीं, वे काशकृत्स्ना के रूप में अभिहित की जाती थीं। [14]
विदेह राजा जनक द्वारा आयोजित दार्शनिक प्रतियोगिता ब्रह्मोध में महिला दार्शनिक गार्गी द्वारा उपस्थित विषय इतने दुर्बोध एवं गूढ थें कि याज्ञवल्क्य ने उन पर विचार–विमर्श करने से मना कर दिया। ''गार्गी द्वारा याज्ञवल्क्य की सूक्ष्म प्रतिपरीक्षा बतलाती है कि वह उच्च कोटि की तार्किक और दार्शनिक थी।'' [15]
वेदान्त की अन्य महिला विद्यार्थी आत्रेयी का उल्लेख भी प्राप्त होता है जो कि वाल्मीकि और अगस्त्य ऋषियों के सानिध्य में अध्ययन करती थी। यज्ञों में साममन्त्रों का संगीतमय सस्वर पाठ प्रायः स्त्रियों का ही विशेष कार्य होता था –

पत्नीकर्मेव वै तेऽत्र कुर्वन्ति युदद्गातारः। [16]

''स्त्रियाँ पति सहयोग हेतु युद्ध में भी जाती थीं। विश्यला अपने पति के साथ युद्ध में गयी थी और वहॉ उसकी जॉघ टूट गयी थी। जिसे अश्विनी–कुमारों ने ठीक किया था। नमुचि के पास भी स्त्रियों की सेना थी। वृत्रासुर के साथ उसकी माता दनु भी युद्ध में गयी थी, जो इन्द्र के द्वारा मारी गयी।''[17] ऋग्वेद स्त्री को सरस्वती स्वरूपा उद्घोषित करते हुए उसके ऊपर सबका जीवन आश्रित मानता है–

त्वे विश्वा सरस्वति श्रितायूंषि देव्याम्। [18]

उपाध्यायों की पत्नियों उपाध्यायिनियों से भेद करने हेतु अध्यापिकाओं को उपाध्याया नाम दिया जाता था। परिवार के वयोवृद्ध गुरुजनों के सानिध्य में पुत्र–पुत्रियों को शिक्षित किया जाता था। ज्ञात होता है कि वैदिककाल में स्त्री शिक्षा का यथेष्ट प्रचार प्रसार था। विवाह पूर्व शिक्षा प्राप्त करने से कन्या विवाह तक 15–16 वर्ष प्राप्त कर लेती थी। वैदिकयुग में स्त्रियों का विवाह पूर्ण युवा होने पर ही होता था। [19]
''साधारणतया उस काल की कन्याएँ 16 वर्ष की अवस्था तक अविवाहित रहती थीं। इसी बीच उनका उपनयन संस्कार किया जाता था तथा वे वेदादि ग्रन्थों का अध्ययन करती थीं। इस सम्पूर्ण अवधि में वे ब्रह्मचर्य पूर्वक रहती थीं।'' [20]
वैदिक काल में पुत्री का भी उपनयन संस्कार सम्पन्न कर उसे वैदिक ज्ञान एवं धार्मिक यज्ञों में प्रशिक्षित किया जाता था। प्रत्येक कन्या को गृहस्थाश्रम में अनिवार्य धार्मिक संस्कारों एवं याज्ञिक क्रियाओं में सक्रिय भागीदारी निभाने हेतु पूर्व ज्ञान देना प्रायः अनिवार्य था। सुशिक्षित स्त्री वैदिक मन्त्रों का स्वाभाविक रूप से सस्वर पाठ कर सकती थी। अविवाहित नारियां पूर्णतया स्वतंत्र रूप से वैदिक यज्ञों को सम्पन्न करती थीं। वेदों में स्नानशुद्धि पश्चात् सोमलता का प्ररोह ले जाती तथा इन्द्र हेतु यज्ञ में समर्पित करती हुई कुमारी का वर्णन प्राप्त होता है। [21] ब्राह्म मूहूर्त्त में उठकर स्वयं यज्ञ प्रारम्भ करती हुई विश्वारा नामक महिला का उल्लेख प्राप्त होता है

एति प्राची विश्ववारा नमोभिर्देवॉ ईडाना हविषा धृताची।। [22]

चूंकि वैदिक काल में वधू शिक्षित एवं पूर्णतः वयस्कावस्था में होती थी अतः वधूएँ अपने श्वसुरालय में स्नेहमय तथा आदरयुक्त व्यवहार सहज प्राप्त करती थीं। वैदिक विवाह सूक्त वधू को सम्राज्ञी होने का आशीर्वाद देता है। साथ ही वधू गृहस्थी की बागडोर शीघ्र ही ग्रहण कर गृहस्थी का प्रबन्धन प्रारम्भ करे। [23] घर के वयोवृद्धजन वधूओं के साथ विचारपूर्वक, आदर और स्नेह का व्यवहार करते थें। वधूएँ परिवार के साथ सामान्य रूप से भोजन में सम्मिलित होती एवं वार्तालाप भी करती थीं। [24] वैदिक विवाहविधि में वर–वधू दोनों को समान प्रतिज्ञाएँ ग्रहण करनी होती थीं।
यजुर्ववेद में स्त्री को कल्याणकारी लक्ष्मी, गृह का सौभाग्य, सौन्दर्य एवं गृहस्थाश्रम की धुरी माना गया है। स्त्री गृहस्थ को नियम में रखने वाली एवं तेजयुक्त प्रकाशमयी कही गई है। [25] वस्तुतः वैदिक काल में पति–पत्नी को समान मानते हुए एक–दूसरे का सखा सम्बोधित किया गया है। [26]

सखायाविव सचावहा अव मन्युं तनोमि ते।। [27]

पत्नी पति के समान ही सम्मानीया एवं गृहस्थधर्म के पालन में सक्रिय सहयोग प्रदान करती थी। स्त्रियों को ब्रह्मचर्य काल में उपनयन संस्कार के पश्चात् वैदिक अध्ययन में दीक्षित किया जाता था।
पत्नी आध्यात्मिक और धार्मिक दृष्टिकोणों से अपरिहार्य थी। धार्मिक प्रार्थनाएँ एवं यज्ञीय आहुतियाँ पति–पत्नी द्वारा संयुक्त रूप से दी जाती थी। [28] देवपूजा में वृद्ध दम्पत्तियों का सन्दर्भ प्राप्त होता है। [29] प्राचीन वैदिक काल में यज्ञों में सामगीतियों का गान सामान्यतया पत्नी का कर्त्तव्य माना जाता था।

पत्नीकर्मेण एतेऽत्र कुर्वन्ति यदुद्गातारः। [30]

"यज्ञ के लिए पत्नी पूर्ण तैयारी करती थी। वह यज्ञ के लिये चावल बनाती थी, पशु को स्नान कराती थी, वेदी का निर्माण करती थी एवं अग्नि तैयार करती थी। तदुपरान्त पति के दायीं ओर स्थित

होकर पति के सहयोग से विधिवत् यज्ञ का सम्पन्न करती थी।'' [31] ऋग्वेद में इन्द्राणी द्वारा धार्मिक कृत्यों और कर्मकाण्डों को प्रारम्भ करने के सन्दर्भ प्राप्त है। [32] यद्यपि ऋतुमती नारी को अपवित्र भी समझा जाता था। किन्तु इस सावधिक अपवित्रता के कारण वह धार्मिक क्षेत्र में हीनता का बोध नहीं करती थी। स्त्रियों हेतु विशेष क्रियाएँ सुनिश्चित थीं। ''शतपथ ब्राह्मण में मिलता है कि स्त्रियाँ सामगान करती थीं तथा उनमें मन्त्रों के शुद्धाच्चारण तथा स्वरों के उचित आरोह एवं अवरोह की सामर्थ्य होती थी।'' [33]

अध्ययन से ज्ञात होता है कि वैदिककाल में नारी को पुत्र की भाँति ही उपनयन संस्कार एवं शिक्षा का अधिकार था। फलस्वरुप समाज, परिवार में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था।

संदर्भ

1. बृह. उप., IV. 4.18
2. ऋग्वेद, 9.67.10
3. ए.ऐस. अल्तेकर : 'हिन्दू सभ्यता में नारियों की स्थिति' (प्रो. गणेशलाल सुथार), पृ. 4
4. अथर्ववेद, 10/3/20, 12/1/25
5. सुषमा शुल्का रू वैदिक वाङ्मय में नारी पृ. 42
6. ऋग्वेद, 1/135/7
7. ए.ऐस. अल्तेकर : 'हिन्दू सभ्यता में नारियों की स्थिति' (प्रो. गणेशलाल सुथार), पृ. 6
8. ऋग्वेद, 8.33.19
9. वही, X, 85, 26
10. ऋग्वेद, IV. 58 7रू ग, 168, 2
11. वही, I, 167, 3
12. अर्थववेद, (XI. 5.18)
13. बृहदेवता, 24.84–86
14. महाभाष्य, IV, 1 14, 3 155
15. बृहदारण्यकोपनिषद, III, 6 और 8
16. शतपथ ब्राहमण, XIV, 3, 1, 35
17. गजानन शर्मा : प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी, पृ. 40
18. ऋग्वेद 2.41.17
19. कोमल चन्द्र जैनः बौद्ध एवं जैन आगमों में नारी, पृ. 44–45
20. सुषमा शुक्ला : वैदिक वाङ्मय में नारी, पृ. 44
21. ऋग्वेद VIII, 91.1
22. वही, V, 28.1
23. अथर्ववेद, XIV, 1.43
24. मैत्रायणीय संहिता, II 4, 2
25. यजुर्वेद, 14.22 एवं 23.18
26. अथर्ववेद, 6.42.1
27. वही, 6.42.2
28. ऋग्वेद, I. 133, 3 एवं I. 72. 5
29. वही, V, 53, 15
30. शतपथ ब्राह्मण, XIV, 3, 1, 35
31. सुषमा शुक्ला रू वैदिक वाङ्मय में नारी, पृ. 58
32. ऋग्वेद, X, 86.10
33. सुषमा शुक्ला : वैदिक वाङमय में नारी, पृ. 43